Gyanvividha [A Peer Reviewed and Refereed Journal] Jan.-March 2024 : Year-1, Vol-2 : PP-12-18

ज्ञानविविधा
रचना, आलोचना और शोध की त्रैमासिक पत्रिका

**Online ISSN : 3048-4537**
Jan.-March 2024 : 1(2)12-18
©2024 Gyanvividha
www.gyanvividha.com

**मोहन कुमार**
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

Corresponding Author :

**मोहन कुमार**
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

# जयशंकर प्रसाद के नाटकों के गीत

हिंदी गीतकाव्य की दृष्टि से छायावाद का काल अत्यंत महत्वपूर्ण है। छायावाद का समय सामान्यतः 1920 से 1936 ई. तक माना जाता है। द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता की प्रतिक्रिया में और सामयिक संदर्भों के परिणामस्वरूप छायावादी कविता का दौर निर्मित हुआ। छायावादी दौर में हिंदी गीतकाव्य उत्कृष्टता के शिखर पर स्थापित हुई। छायावाद के लगभग सभी महत्वपूर्ण कवियों ने गीत को प्रमुख काव्य-विधा के रूप में अपनाया और प्रचुर संख्या में गीतों की रचना की। इस दौर में काफी वैविध्यपूर्ण गीत लिखे गए। इन गीतों में गांव के विविध दृश्यों, प्रकृति प्रेम, मानव प्रेम और देश प्रेम को मुख्य रूप से गीतों का विषय बनाया गया। आधुनिक काल में छायावाद गीतकाव्य की दृष्टि से सर्वाधिक संपन्न और समृद्ध है। जिस प्रकार भक्तिकाल को हिंदी कविता का स्वर्णकाल कहा जाता है, उसी प्रकार छायावाद को आधुनिक हिंदी गीतकाव्य का स्वर्णकाल कहा जा सकता है। छायावाद की रचनाएं अधिकतर गीतों के रूप में अथवा गीतात्मक ढंग पर हुई है। छायावाद गीत प्रधान काल ही था। प्रायः सभी महत्वपूर्ण छायावादी कवियों ने अपनी अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिए गीतों को श्रेष्ठ माध्यम के रूप में चुना। छायावादी काव्य विषयी प्रधान था। अत: गीतात्मक मुक्तकओं का प्रचलन बढ़ गया जो व्यक्तिगत भावोच्छवास को आधार बनाकर लिखे जाते थे। वैसे भी एक विशेष प्रकार की अनुभूतियों के प्रकाशन के लिए श्रेष्ठ माध्यम गीत अथवा प्रगीत ही होता है। इस कारण से भी छायावादी दौर में गीतकाव्य का अधिक विकास हुआ। छायावाद कालीन गीतों में प्रेम तत्व की प्रधानता है। सांगीतिकता, विचारों की योजना, प्रकृति का उद्गार, भावपूर्ण और कलात्मक चित्रण, नवीन सौंदर्यबोध, चित्रात्मकता, वेदना की प्रधानता, मानव की

प्रतिष्ठा, छंदों का मिश्रण, स्वाभाविकता, आत्मनिष्ठता आदि छायावाद कालीन गीतों की महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं। छायावाद कालीन गीतकारों में जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण 'शर्मा नवीन' रामकुमार वर्मा, आदि कवि-गीतकार प्रमुख हैं। इन्होंने छायावाद कालीन गीतकाव्य को नए-नए रूप रंग देकर सजाने-संवारने का काम किया है। पंडित लालधर त्रिपाठी प्रवासी के अनुसार- "माखनलाल चतुर्वेदी और बालकृष्ण शर्मा नवीन के गीतों का मुख्य विषय स्वदेश प्रेम है और इन्होंने मुक्त कंठ से देश प्रेम के गीत गाये हैं। प्रसाद जी की गीतियां अधिकतर श्रृंगारपरक, पंत जी की प्रकृतिपरक, निराला जी के दार्शनिक और प्रकृतिपरक तथा महादेवी जी की गीतियां अरूपपरक है। हिंदी का गीतिगाव्य इन कवियों द्वारा विशेष समृद्ध हो उठा, इसमें संदेह नहीं।"[1] जयशंकर प्रसाद के गीतों में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक-ऐतिहासिक चेतना, प्रेम और करुणा की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। 'लहर' तथा 'आंसू' में प्रसाद जी के श्रेष्ठ और सुंदर गीत संकलित हैं। यहां इन रचनाओं से एक-एक उदाहरण प्रस्तुत है-

"मेरी आंखों की पुतली में
तू बनकर प्राण समा जा रे!
जिससे कन कन में स्पंदन हो
मन में मलयानिल चंदन हो
करुणा का नव अभिनंदन हो
वह जीवन गीत सुना जा रे!"[2]

और,

"शशि-मुख पर घूंघट डाले
आँचल में दीप छिपाये
जीवन की गोधूलि में
कौतूहल से तुम आए!"[3]

जयशंकर प्रसाद के नाटकों चंद्रगुप्त, स्कंदगुप्त, तथा महाकाव्य कामायनी में भी बहुत से अच्छे गीतों की रचना की गई है। छायावाद के महत्वपूर्ण कवि और श्रेष्ठ गीतकार निराला ने प्रसाद जी के गीतों के संबंध में अपनी रचना गीतिका की भूमिका में लिखा है कि -"खड़ी बोली में नये गीतों के प्रथम सृष्टिकर्ता प्रसाद जी हैं। उनके नाटकों में अनेक प्रकार के नये गीत हैं।"[4]

सुमित्रानंदन पंत प्रकृति के सुकुमार कवि कहलाते हैं। कविता के साथ-साथ उनके गीतों में भी प्रकृति से सहज जुड़ाव देखा जा सकता है। उन्होंने 'भारतमाता ग्रामवासिनी' जैसे कई सुंदर गीत लिखे हैं। पंत जी के गीतों में शब्द और अर्थ का अद्भुत सामाजिक दिखाई पड़ता है। 'ज्योत्सना' में पंत जी के सुंदर गीत संकलित हैं। इन गीतों में पंत जी का सहज, सुकुमार, कोमल भाव और व्यक्तित्व के दर्शन होते हैं। ज्योत्सना का एक गीत उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है-

"जगमग-जगमग, हम जग का मग,
ज्योतित प्रतिपग करते जगमग।
हम ज्योति-शलभ, हम कोमल-प्रभ,
हम सहज सुलभ दीपों के नभ!
चंचल, चंचल, बुझ-बुझ, जल-जल
शिशु उर पल-पल हटते छल-छल!
हम पटु नभचर, हँसमुख सुंदर

स्वप्नों को हर लाते भू पर!
झिलमिल-झिलमिल, स्वप्निल, तंद्रिल
आभा दिल-मिल, भरते झिलमिल!"[5]

गीतकाव्य की दृष्टि से सुमित्रानंदन पंत की वीणा, पल्लव, गुंजन, ग्राम्या, खादी के फूल आदि कृतियों में उनके द्वारा रचित गीत मिलते हैं। इन गीतों में मनुष्य का स्वाभाविक सहजपन, राग, यौवन, चिंतन, प्रकृति से लगाव, देशप्रेम और जीवन की गूढ़ विवेचना जैसी विशेषताएं मिलती हैं।

नाटक को समस्त ललित कलाओं का संगम कहा गया है। शास्त्र से लेकर शिल्प तक सभी विधाएं नाटक की परिधि में शामिल होती हैं अन्य कलाओं की अपेक्षा गीत और संगीत से नाटक का घनिष्ठ संबंध होता है। अरस्तू ने भी नाटकों में गीत को आवश्यक और महत्वपूर्ण माना है। नाट्यशास्त्र के प्रणेता भरतमुनि ने भी गीत को नाटक का अभिन्न अंग माना है। नाटक में गीत को शामिल करना नाटक के उत्पन्न प्रभाव को तीव्र करता है। इसलिए गीत नाटक के लिए आवश्यक प्रतीत होते हैं। रस की उत्पत्ति के लिए भी गीत का विशेष महत्व है क्योंकि गीत और संगीत वातावरण में उपस्थित रस को गहरा करने और बढ़ाने के लिए महत्त्वपूर्ण होता है।गीत नाटक की जीवन शक्ति के रूप में उपस्थित अपनी भूमिका का निर्वाह करता है। गीत के माध्यम से चरित्रों-पात्रों आदि के मनोभावों को और भी अत्यधिक मनोहारी रूप में प्रस्तुत करने में मदद मिलती है। पात्रों के उत्थान-पतन, आशा-निराशा, हर्ष-उल्लास को गीतों के माध्यम से और भी सुंदर ढंग से व्यक्त किया जाता है। नाटकों में गीत का मनोवैज्ञानिक महत्व भी होता है।

जयशंकर प्रसाद ने कई नाटकों की रचना की है। उनके द्वारा लिखे गए नाटकों में एक घूँट, राज्यश्री, स्कंदगुप्त, कामना, चंद्रगुप्त, जन्मेजय का नागयज्ञ, ध्रुवस्वामिनी, अजातशत्रु, विशाख, करुणालय, कल्याणी परिणय, सज्जन आदि प्रमुख हैं। नाटकों में शामिल गीतों की दृष्टि से प्रसाद जी के तीन नाटक-चन्द्रगुप्त, स्कन्दगुप्त और ध्रुवस्वामिनी प्रमुख हैं। प्रसाद के नाटकों में आयें गीत भारतीयता के रंग से सराबोर हैं। अर्थात् उनमें भारतीय सभ्यता और संस्कृति की गहरी छाप दिखाई पड़ती है। साथ ही उनके नाटकों के गीत काव्यगत आनंद की अनुभूति भी कराते हैं।

चंद्रगुप्त नाटक का प्रकाशन सन् 1931 में हुआ। चार अंक और सैंतालीस दृश्यों के इस नाटक में 11 महत्वपूर्ण गीत शामिल हैं। नाटक का प्रथम गीत एक प्रेमगीत है जिसमें करूणा और शृंगार रस के भाव की प्रधानता है। सुवासिनी गाती है-

"तुम कनक किरन के अंतराल में
लुक छुप कर चलते हो क्यों?
नत मस्तक गर्व वहन करते
यौवन के घन, रस कन ढरते
हे लाज भरे सौंदर्य! बता दो–
मौन बने रहते हो क्यों?"[6]

जयशंकर प्रसाद का चंद्रगुप्त नाटक एक ऐतिहासिक नाटक है। इसमें ऐतिहासिक घटनाओं और पात्रों के द्वारा भारत के प्राचीन वैभवशाली और समृद्धि इतिहास की पुनर्सजना तत्कालीन पराधीनता के दौर में जन सामान्य के भीतर आशा और उत्साह का संचार करने के लिए किया गया है। नाटक में एक विदेशी पात्र कार्नेलिया के द्वारा गाये गये इस गीत के माध्यम से जहां एक और भारत के समृद्ध और गौरवशाली अतीत का परिचय मिलता है वहीं दूसरी ओर जयशंकर प्रसाद राष्ट्र-राज्य की सीमा का अतिक्रमण कर उस मूल्यबोध को विशेष महत्व देते हुए नजर आते हैं जिसमें कोई विदेशी भी भारत की महानता की स्तुति करने को विवश हो जाता है–

"अरुण यह मधुमय देश हमारा!

जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलने एक सहारा।
सरस तामरसगर्भ विभा पर नाच रही तारुशिखा मनोहर।
छिटका जीवन हरियाली पर– मंगल कुंकुम सारा।
लघु सुरधनु से पंख पसारे– शीतल मलय समीर सहारे।
उड़ते खग जिस और मुंह किये– समझ नीड़ निज प्यारा।
बरसाती आंखों के बादल– बनते जहां भरे करुणा जल।
लहरें टकराती अनंत की– पाकर जहां किनारा।
हेमकुंभ ले उषा सबेरे– भरती ढुलकाती सुख मेरे।
मंदिर ऊंघते रहते जब– जग कर रजनी भर तारा।
अरुण यह मधुमय देश हमारा।"[7]

जयशंकर प्रसाद पराधीनता के कालखंड में साहित्य के मोर्चे पर स्वाधीनता आन्दोलन के संघर्ष को अपनी कविता और अपने नाटकों के स्तर पर लड़ रहे थे। दया, धर्म, त्याग, करुणा, साहस, वीरता और बलिदान भारत-भूमि की और भारतीय संस्कृति की पहचान रही है। पराधीनता और विदेशी शोषण ने भारत की इन विशेषताओं पर आघात कर भारतीय चेतना और सांस्कृतिक प्राणतत्व को नष्ट करने का प्रयास किया। जयशंकर प्रसाद के गीत भारतीय लोगों के अदम्य साहस, संकल्प शक्ति, वीरता और शाश्वत अपराजेयता के भाव को मजबूत करते हैं। वे एक ऐसी कर्मठ,वीर, साहसी, निडर और बलिदानी पीढ़ी को तैयार करने की आवश्यकता पर बल देते हैं जो बिना रुके और बिना थके निरंतर राष्ट्रोत्थान के पथ पर चलता रहे। उपरोक्त विशेषताओं के अतिरिक्त उनके इस गीत में युगीन आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति को भी देखा जा सकता है–

"हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती–
'अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़- प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो, बढ़े चलो!'
असंख्य कीर्ति-रश्मियाँ विकीर्ण दिव्य दाह-सी
सपूत मातृभूमि के- रुको न शूर साहसी!
अराति सैन्य-सिंधु में, सुवाड़वाग्नि से जलो,
प्रवीर हो जयी बनो-बढ़े चलो, बढ़े चलो!"[8]

गीतों की दृष्टि से चंद्रगुप्त के बाद जयशंकर प्रसाद के नाटकों में स्कंदगुप्त का महत्वपूर्ण स्थान है। स्कंदगुप्त नाटक का प्रकाशन 1928 ईस्वी में हुआ। इस नाटक में एक और गुप्तकालीन समय में राजगद्दी के लिए किए जाने वाले षड्यंत्रों का चित्रण है तो दूसरी तरफ विदेशी आक्रमण से राष्ट्र की रक्षा का भाव भी दिखाई पड़ता है। स्कंद गुप्त नाटक में सोलह प्रमुख गीत हैं। इन गीतों के विषय मातृभूमि से प्रेम, स्त्रियों की दशा, जीवन का दर्शन, ईश्वर से प्रार्थना आदि हैं।

मातृभूमि के प्रति लगाव, प्रेम और श्रद्धा का भाव भारतीय संस्कृति की अन्यतम विशेषता है। भारतीय संस्कृति के सुंदर और श्रेष्ठ भाव समस्त विश्व और मानवता के लिए शुभ और कल्याणकारी थी परंतु विदेशी पराधीनता, लापरवाही और अन्य मादक राग-रंग, व्यसनों आदि में डूबकर भारत के लोग अपनी ही संस्कृति के श्रेष्ठ तत्वों को भूलने लगे। इससे न केवल भारतीय संस्कृति का बल्कि मानवता का भी बहुत नुकसान हुआ। जयशंकर प्रसाद इस समस्या को अपनी गीतों में उठते हैं और भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ, सुंदर, शुभ

और कल्याणकारी तत्वों को स्मरण रखने, सहेजने और बढ़ाने की प्रेरणा देते हैं–

संस्कृति के वे सुंदरतम क्षण
यों ही भूल नहीं जाना।
'वह उच्छृंखलता थी अपनी'–
कहकर मत बहलाना।"[9]

हमारी परंपरा और संस्कृति में स्त्रियों की संकल्पना शक्ति के रूप में की गई है। यह भारतीय संस्कृति की विशेषता रही है कि यहां स्त्रियां न सिर्फ पुरुषों के साथ-साथ चलती हैं बल्कि की आवश्यकता पड़ने पर पुरुषों को राह भी दिखती हैं। स्कन्दगुप्त नाटक में शामिल एक गीत में देवसेना देश की दुर्दशा से दुखी होकर पुरुषों को सचेत करती और उनमें साहस का संचार करती हुई कहती हैं–

"देश की दुर्दशा निहारोगे, डूबते को कभी उबारोगे ?
हारते ही रहे, न है कुछ अब, दाँव पर आपको न हारोगे ?
कुछ करोगे कि बस सदा रोकर, दीन हो दैव को पुकारोगे !
सो रहे तुम, न भाग्य सोता है, आप बिगड़ी तुम्ही सँवारोगे।
दीन जीवन बिता रहे अब तक, क्या हुए जा रहे, विचारोगे?"[10]

जयशंकर प्रसाद एक महान कवि हैं। उनके नाटकों में शामिल गीतों में जीवन, जगत, देश, काल , परिस्थिति, कर्मण्यता आदि से संबंधित उनके महत्वपूर्ण विचार और दर्शन भी व्यक्त हुए हैं। स्कंदगुप्त नाटक के इस गीत में जीवन की निरंतर गतिमान होने की विशेषता के साथ उसकी क्षणभंगुरता और मनुष्य के कर्म-सौंदर्य के प्रति उनके दार्शनिक भाव-बोध की झलक मिलती है। जीवन हमेशा गतिशील होता है, उसका बीतना हर क्षण जारी रहता है। जीवन मनुष्य को भविष्य के युद्ध में लगाकर उसको कर्मरत रखता है। इसलिए मनुष्य को भी चाहिए कि वह वह जीवन में ठहराव की कामना करने के बजाय अपने कर्तव्य-पथ पर चलता रहे–

"सब जीवन बीता जाता है।
धूप-छाँह के खेल सदृश।
सब जीवन बीता जाता है।
समय भागता है प्रतिक्षण में
नव-अतीत के तुषार-कण में,
हमें लगाकर भविष्य-रण में,
आप कहाँ छिप जाता है।
सब जीवन बीता जाता है।
बुल्ले, लहर, हवा के झोंके,
मेघ और बिजली के टोंके,
किसका साहस है कुछ रोके,
जीवन का वह नाता है।
सब जीवन बीता जाता है।
बंशी को बस बज जाने दो,
मीठी मींड़ों को आने दो,

आँख बंद करके गाने दो,

जो कुछ हमको आता है।

सब जीवन बीता जाता है।"[11]

तीन अंक के ध्रुवस्वामिनी नाटक में जयशंकर प्रसाद ने चार गीत शामिल किये हैं। ध्रुवस्वामिनी नाटक का प्रकाशन वर्ष 1933 में हुआ था। इस नाटक का कथानक गुप्तकाल से संबंधित है। ध्रुवस्वामिनी नाटक में प्रसाद जी के द्वारा इतिहास की प्राचीनता के आलोक में वर्तमान की समस्याओं को उद्घाटित किया गया है। इस नाटक में शामिल चार गीतों में पहला गीत मंदाकिनी के द्वारा गया जाता है। यह गीत जीवन की मुश्किलों और दुखों के सामने अपने कर्तव्य को निर्धारित करने तथा न्याय के कमजोर पक्ष को अपनी करुणा और प्रेम प्रदान करके सुदृढ़ करने की आवश्यकता पर बल देता है-

"यह कसक अरे आँसू सह जा।

बनकर विनम्र अभिमान मुझे

मेरा अस्तित्व बता, रह जा।

बन प्रेम छलक कोने-कोने

अपनी नीरव गाथा कह जा।

करुणा बन दुखिया वसुधा पर

शीतलता फैलाता बह जा।"[12]

यौवन चंचल होता है। प्रेम करने की एक ऋतु होती है। प्रेम का पथ समर्पण और त्याग का पथ होता है। प्रेम में समर्पण और त्याग से चूकना या लाभ-हानि के विचार से व्यवहार करना, दोनों एक बराबर है। संसार दोनों को ही ठीक नहीं समझता है। यौवन की क्षणभंगुरता और प्रेम की वास्तविक के इन्हीं प्रश्नों पर विचार करती हुई ध्रुवस्वामिनी की कोमा गाती है–

"यौवन! तेरी चंचल छाया।

इसमें बैठे घूँट भर पी लूँ जो रस तू है लाया।

मेरे प्याले में मद बनकर कब तू छली समाया।

जीवन-वंशी के छिद्रों में स्वर बनकर लहराया।

पल भर रुकनेवाले!कह तू पथिक!कहाँ से आया?[13]

जयशंकर प्रसाद के नाटकों में गीतों के मिश्रण ने अभिव्यक्ति को अद्वितीय बना दिया है। यद्यपि उनके नाटकों में प्रयुक्त गीतों के विरोध में कई बातें कही गयीं लेकिन वास्तविकता यह है कि प्रसाद के नाटकों में गीतों का महत्व ऐतिहासिक और कालगत नहीं अपितु उनका कलात्मक मूल्य अधिक महत्वपूर्ण है। उनके नाटकों में काव्य की एक गहरी और समृद्ध धारा बहती है। उनके गीत पात्र-योजना के अनुरूप हैं और उनमें भाव-सर्जना,काव्यात्मक गरिमा तथा स्थान की उपयुक्तता का भी ध्यान रखा गया है। डॉ द्वारिका प्रसाद सक्सेना ने ठीक पहचाना है कि जयशंकर प्रसाद के नाटकों के गीत दर्शकों और सामाजिक के हृदय में सरसता का संचार करने वाले हैं। इन गीतों में भावों का सौंदर्य, कल्पना का विलास, गीत का माधुर्य और प्रतिभा का सुन्दर उन्मेष दिखाई पड़ता है। आधुनिक तकनीक और उपकरणों के माध्यम से प्रसाद के नाटकों में शामिल गीतों की प्रस्तुति संभव हुई है। जयशंकर प्रसाद के नाटकों में प्रयुक्त गीतों पर अनावश्यक और बोझिल होने का आरोप लगाने वाले यह भूल जाते हैं कि ये गीत नाटकों के सौंदर्य को और उसके प्रभाव को बढ़ाते हैं। इन गीतों के बिना नाटकों से सुन्दरता और अभिव्यक्ति की गहराई ही समाप्त हो जायेंगी। इसलिए जयशंकर प्रसाद के नाटकों में प्रयुक्त

गीत आवश्यक और महत्वपूर्ण हैं।

**संदर्भ -**


1. पंडित लालधर त्रिपाठी 'प्रवासी', गीतिकाव्य का विकास, पृ.469
2. जयशंकर प्रसाद, लहर, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-1, संस्करण 2014, पृ.42
3. जयशंकर प्रसाद,ऑंसू, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-1, लोकभारती संस्करण 2019, पृ.19
4. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, गीतिका(भूमिका),पृ.1
5. सुमित्रानंदन पंत, ज्योत्सना, गंगा पुस्तकमाला लखनऊ, प्रथम संस्करण, सं.1991 वि. पृ.44
6. जयशंकर प्रसाद, चंद्रगुप्त, मयूर पेपरबैक्स, सातवां संस्करण, 2013 ,पृ.11
7. वही, पृ. 53
8. वही, पृ.152
9. जयशंकर प्रसाद, स्कन्दगुप्त, भारती भण्डार, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, पृ.18
10. वही, पृ.158
11. वही, पृ.94
12. जयशंकर प्रसाद, ध्रुवस्वामिनी, भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली-110003, तीसरा संस्करण, 2016,पृ .18
13. वही, पृ.32